बिज़नेस स्टैंडर्ड
वर्ष 12 अंक 188

निजी रेल का मुश्किल सफर

भारतीय रेल यात्रियों को जल्द ही निजी रेल की यात्रा करने का अवसर मिल सकता है। इस संभावना ने इस क्षेत्र पर नजर रखने वाले अनेक पर्यवेक्षकों का ध्यान अपनी ओर आकृष्ट किया है। खबरों के मुताबिक भारतीय रेल, ट्रेनों के परिचालन के लिए निजी-सार्वजनिक भागीदारी का खाका तैयार कर चुका है और अगले वर्ष के आरंभ में संभावित मार्गों की बोली प्रक्रिया आरंभ हो जाएगी। यह समय सीमा उचित प्रतीत होती है क्योंकि माल ढुलाई कॉरिडोर अगले दो वर्ष में शुरू हो जाएंगे। इससे दिल्ली, कोलकाता और मुंबई के बीच मौजूदा मिश्रित उपयोग वाले कॉरिडार की क्षमता काफी हद तक मुक्त हो जाएगी। अगले तीन से चार साल में ऐसे नए मार्गों पर भी अनुमति दी जा सकती है जहां ट्रेनों की अधिकतम गति 160 किलोमीटर प्रति घंटे तक होगी। रेलवे को उम्मीद है कि करीब 150 मार्ग निजी सेवा प्रदाताओं को दिए जा सकते हैं जो अपने कोच-इंजन और चालकों के साथ सेवा शुरू करेंगे। इन्हें रेलवे द्वारा प्रमाणित किया जाएगा। यदि सबकुछ योजना के मुताबिक चला और विदेशी निवेशक मसलन यूरोप की बड़ी रेल कंपनियां इसमें रुचि दिखाती हैं तो रेलवे को इससे ढेर सारे संसाधन हासिल होंगे।

इसकी प्रेरणा तो समझी जा सकती है लेकिन यह विचार आप में गलत है। इस विषय पर ढेरों सवाल खड़े हो सकते हैं और कुछ सवाल तो ऐसे हैं जो इस पूरी योजना को ही खारिज करने की स्थिति तैयार कर सकते हैं। उदाहरण के लिए निजी क्षेत्र को परिचालन के लिए कौन से मार्ग और कौन सा समय आवंटित किया जाएगा? अगर सबसे लाभकारी मार्ग और समय दिए जाएंगे तो क्या इसका सीधा असर रेलवे के संसाधनों पर नहीं पड़ेगा? दूसरा, क्या कंपनियों को मूल्य तय करने का अधिकार भी होगा? एक स्वतंत्र नियामक गठित करने का वादा किया गया है लेकिन किराये की सीमा तय करने की भी चर्चा है। अगर संबंधित अनुबंध लंबी अवधि के लिए किए गए तो यकीनन मूल्य तय करने का अधिकार निजी परिचालकों को होगा, वरना उनका जोखिम बहुत अधिक बढ़ जाएगा जो स्वीकार्य नहीं होगा। स्वतंत्र नियामक ही विवाद भी हल करेगा। परंतु हमारे देश में निजी और सार्वजनिक क्षेत्र के विवाद अंतहीन होते हैं। इन्हें हल करना बहुत मुश्किल होता है। इस मामले में शायद हर मिनट विवाद खड़ा हो क्योंकि रेलें स्टेशन पर जगह के लिए प्रतिस्पर्धा करेंगी या भीड़ वाले मार्ग में पहुंच को लेकर प्रतिस्पर्धा उत्पन्न होगी। किसी भीड़ भरे स्टेशन के बाहर किसे प्राथमिकता मिलेगी भारतीय रेल की उपनगरीय ट्रेन को या निजी परिचालक की ट्रेन को? यदि भारतीय रेल अपनी ट्रेन के पक्ष में निर्णय करती है तो क्या इस निर्णय के खिलाफ अपील हो सकती है, और अपील का बिंदु क्या होगा क्योंकि यह मुद्दा तो मिनटों में निपटाना होगा। इस परिदृश्य में कुछ ही निवेशक रुचि दिखाएंगे।

अगर निजी परिचालकों को ध्यान में रखना है तो भारतीय रेल और रेलवे बोर्ड में भी सुधार जरूरी हैं। संभवत: इन्हें अलग भी करना होगा। यदि नेटवर्क की मालिक भी बतौर सेवा प्रदाता निजी परिचालकों के साथ प्रतिस्पर्धा करेगी तो विवाद और भ्रष्टाचार के अंतहीन अवसर उत्पन्न होंगे। तार्किक ढंग से देखा जाए तो निजी क्षेत्र की रेल और सरकारी नेटवर्क को एक दूसरे से पूरी तरह अलग करना होगा। परंतु तब ब्रिटेन की तरह नेटवर्क में निवेश की कमी की समस्या उत्पन्न हो सकती है। निजी ट्रेन का विचार अच्छा लग सकता है लेकिन रेलवे में आमूलचूल सुधार का कोई विकल्प नहीं है। इसकी शुरुआत विभिन्न विभागों के बीच की दीवार खत्म कर कॉर्पोरेट शैली में एकीकृत ढांचा तैयार करके करनी होगी।

अजय मोहंती

नौसैनिक ताकत दिलाएगी हिंद-प्रशांत क्षेत्र में बढ़त

हिंद महासागर में चीन के युद्धपोतों की लगभग स्थायी मौजूदगी होने से भारत को अपनी नौसेना को ताकतवर बनाने की जरूरत है ताकि वह इस क्षेत्र में अहम भूमिका निभा सके। बता रहे हैं **प्रेमवीर दास**

दुनिया के इस हिस्से में हिंद-प्रशांत शब्दावली एक अहम सामरिक स्थान हासिल कर चुकी है। हालांकि हिंद-प्रशांत को लोग अलग-अलग नजरिये से देखते हैं। अमेरिका के राष्ट्रपति डॉनल्ड ट्रंप की नजर में यह एक भू-राजनीतिक इकाई है जिसका विस्तार भारत के पूर्वी तट से लेकर पश्चिमी प्रशांत तक है। प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी के हिसाब से हिंद-प्रशांत का इलाका अफ्रीका के पूर्वी तट से लेकर अमेरिकी तट तक है। कुछ लोगों के लिए इस क्षेत्र का विस्तार अब पश्चिम की तरफ हो चुका है। वहीं आसियान के अधिकांश देशों के लिए यह दक्षिण चीन सागर के साथ लगा हुआ इलाका है।

वहीं चीन की राय में हिंद-प्रशांत जैसे क्षेत्र का वजूद ही नहीं है और यह महज अमेरिका एवं उसके समर्थकों की उपज है। रूस, जापान और चीन के हित हिंद-प्रशांत से जुड़े हुए हैं। भारत के लिए इस शब्दावली के मायने इस बात से तय होंगे कि उसकी चिंताएं क्या हैं और हमारे सुरक्षा हितों पर उसका क्या असर पड़ रहा है?

विदेश मंत्री एस जयशंकर ने रूस की अपनी हालिया यात्रा के दौरान भारत की स्थिति को सारगर्भित ढंग से पेश किया था। विदेश सचिव के अलावा सिंगापुर और चीन में भारत के राजदूत भी रह चुके जयशंकर को इसकी अहमियत के बारे में बखूबी पता है। उन्होंने इस बात को रेखांकित किया कि हमारी सामरिक परिदृश्य लुक ईस्ट से ऐक्ट ईस्ट के रूप में बदला था और अब यह हिंद-प्रशांत पर केंद्रित हो रहा है। उन्होंने इस विशाल समुद्री क्षेत्र में आसियान के बुनियादी योगदान का जिक्र किया और एक तरफ खाड़ी एवं अफ्रीका क्षेत्र और दूसरी तरफ पश्चिमी प्रशांत के तटीय इलाके में भारत के अंतरफलक का उल्लेख किया।

हिंद महासागर के मध्य में स्थित होने और करीब 55 फीसदी विदेशी कारोबार इस विशाल समुद्री क्षेत्र से होकर गुजरने की वजह से भारत की सामरिक चिंताएं इस क्षेत्र के पश्चिमी तट से लेकर पूर्व की तरफ आसियान, जापान, दक्षिण कोरिया और चीन तक फैली हुई हैं। राजनीतिक रूप से महज नजदीकी पड़ोस ही नहीं बल्कि दूर के तटीय इलाके भी चिंता का मुद्दा होते हैं। लिहाजा भारत के लिए हिंद-प्रशांत केवल बयानबाजी नहीं बल्कि जमीनी हकीकत है और इस क्षेत्र में शांति स्थापना के लिए अहम है।

चीन हिंद-प्रशांत की धारणा में यकीन ही नहीं रखता है। उसने हमेशा ही पूर्व एवं दक्षिण चीन सागर को अपना इलाका माना है और जापान के साथ रिश्ते एवं दक्षिण चीन सागर में इस धारणा का असर नजर आता रहा है। चीन का जापान के अलावा वियतनाम, मलेशिया और फिलीपींस के साथ समुद्री इलाके को लेकर टकराव रहा है। पिछले दो दशकों में चीन ने हिंद महासागर के पश्चिमी सिरे तक अपने हितों का विस्तार कर दिया है।

चीन ने म्यांमार, श्रीलंका, मालदीव और पूर्वी अफ्रीकी तट पर नौवहन ढांचा तैयार करने के अलावा जिबूती और पाकिस्तान के ग्वादर में अपने नौसैनिक अड्डे भी स्थापित किए हैं। इसके जहाज हिंद महासागर में लगभग स्थायी तौर पर मौजूद रहते हैं और चीनी पनडुब्बियां भी आती-जाती रहती हैं। असल में, दूर होने के बावजूद चीन हिंद महासागर की एक वास्तविक समुद्री ताकत बन चुका है। अमेरिका की तो हमेशा से ही इस क्षेत्र में दबदबे वाली मौजूदगी रही है।

कुल मिलाकर, हिंद-प्रशांत क्षेत्र को कोई देश स्वीकार करे या नहीं, सच तो यही है कि यह बड़ा इलाका वजूद में है और यह बुनियादी तौर पर एक नौवहन क्षेत्र है। दर्जनों देशों के तट इस क्षेत्र में हैं और इसके समुद्रों पर वे निर्भर हैं। मध्य एशियाई गणराज्य, अफगानिस्तान और नेपाल जैसे भूमिबद्ध देशों को भी हिंद-प्रशांत के समुद्री इलाके तक पहुंच के रास्ते एवं साधन तलाशने होते हैं और इस तरह ये देश भी वहां के घटनाक्रम से प्रभावित होते हैं। बहुत कम देशों के पास ही इस क्षेत्र में आवागमन की आजादी प्रभावित करने या उस पर नजर रखने के लिए आकार और सामरिक जरूरत मौजूद है और भारत उनमें से एक है। निश्चित रूप से भारत हिंद महासागरीय परिक्षेत्र में प्रमुख क्षेत्रीय स्थान रखता है।

हिंद-प्रशांत में सार्थक भूमिका निभाने की मंशा रखने वाले देश के पास तीन गुण होने अनिवार्य हैं। उसके पास एक स्थिर एवं जोड़ने वाली नीति होने के साथ ही आर्थिक एवं तकनीकी सामर्थ्य होना भी जरूरी है। तीसरा अपरिहार्य गुण, अपनी सामरिक दृष्टि के अनुरूप समुद्री ताकत भी हो। अमेरिका पहले से ही एक भरोसेमंद नौसैनिक शक्ति है और चीन ने भी अपनी सैन्य शक्ति को अपनी समुद्री जरूरतों के हिसाब से पुनर्गठित किया है। हमें भारत को भी इसी संदर्भ में देखना होगा।

नौसेना प्रमुख ने गत दिनों पुणे में एक संगोष्ठी को संबोधित करते हुए कहा था कि रक्षा बजट में नौसेना की हिस्सेदारी घटकर 13 फीसदी पर आ गई है जबकि वर्ष 2013 में यह 18 फीसदी हुआ करती थी। रोचक बात यह है कि 1987 में भी नौसेना की बजट हिस्सेदारी 13 फीसदी ही थी लेकिन धीरे-धीरे बढ़ते हुए करीब ढाई दशक बाद 18 फीसदी के स्तर पर पहुंची थी। चौंकाने वाली बात यह है कि जंगी बेड़े एवं पनडुब्बियों की संख्या अब भी कमोबेश तीन दशक पहले के स्तर पर ही है। जिस देश का शीर्ष नेतृत्व हिंद-प्रशांत को अपनी सामरिक रणभूमि घोषित करता है, उसकी नौसेना के बजट में गत छह वर्षों में आई गिरावट अचंभित करती है।

इसकी बड़ी वजह यह है कि राष्ट्रीय सुरक्षा के बारे में कोई भी सुसंगत एवं समग्र रणनीति बन ही नहीं पाई है और कभी दफन हो चुका 'दो मोर्चों पर जंग की तैयारी' वाला सिद्धांत हाल के वर्षों में फिर से विमर्श का मुद्दा बन चुका है। इसके लिए हमारे पास मौजूदा आकार जितनी एक सहयोगी सेना रखने की जरूरत होगी और उसके हिसाब से हमें हथियार, साजो-सामान और उनके रखरखाव के लिए संसाधन झोंकने पड़ेंगे जिससे राजस्व खर्च बढ़ जाएगा।

ऐसे में सेना के तीनों अंगों के लिए बजट हिस्सेदारी की भविष्यवाणी के लिए बहुत बुद्धिमान होने की जरूरत नहीं है। थल सेना को 55 फीसदी, वायु सेना को 22 फीसदी और नौसेना को 13 फीसदी देने के बाद बाकी रकम डीआरडीओ एवं अन्य में बांट दी जाए। हो सकता है कि ये आंकड़े पूरी तरह सही न हो लेकिन वे एकदम गलत भी नहीं हो सकते हैं। लिहाजा नौसैनिक दबदबा हासिल करने की चाहत एक सपना ही बनी रहेगी।

हम जब तक अपनी समूची सेना के संरचनात्मक विन्यास की समीक्षा नहीं करते हैं, तब तक यही स्थिति बनी रहेगी। संरचनात्मक समीक्षा के लिए एक दीर्घकालिक सुरक्षा रणनीति बनाने की जरूरत होगी। ऐसी चर्चाएं हैं कि यह प्रक्रिया शुरू हो सकती है। उम्मीद करते हैं कि यह काफी बड़े बदलाव लेकर आएगी और पुरानी संकल्पनाओं को तिलांजलि दे देगी। अगर हिंद-प्रशांत क्षेत्र को हमारा सामरिक रंगमंच बनाना है तो हमें अपनी नौसैनिक ताकत को सशक्त करना होगा।

(लेखक राष्ट्रीय सुरक्षा सलाहकार बोर्ड के पूर्व सदस्य हैं)

आर्थिक मोर्चे पर क्या कुछ किए जाने की है जरूरत?

सम सामयिक

टीसीए श्रीनिवास-राघवन

मोदी की खुशकिस्मती है कि उनके पास एक बार फिर यह सुनहरा अवसर है कि वह एक बड़े सुधारक के रूप में सामने आएं। उनके पास साढ़े चार वर्ष का समय है। देखना होगा कि वह इसका इस्तेमाल कैसे करते हैं

बीते करीब दो महीनों से वित्त मंत्री निर्मला सीतारमण को कठोर आलोचना का सामना करना पड़ रहा है। पहली तिमाही के जीडीपी आंकड़े सार्वजनिक होने के बाद इनकी प्रकृति भी और अधिक क्रूर हो गई है। यह उनकी गलती नहीं थी। उन्होंने जो बजट प्रस्तुत किया था वह उन्हें तैयार करके दिया गया था। बजट की गलतियों के लिए व्यापक तौर पर प्रधानमंत्री कार्यालय में पदस्थ वित्त सचिव और संयुक्त सचिव जवाबदेह थे। अब दोनों ही पद पर नहीं हैं। वित्त सचिव ने तो विरोध स्वरूप अपना पद छोड़ा।

बीते एक महीने में वित्त मंत्रालय को संसाधनों की काफी कमी का सामना करना पड़ा। इसके बावजूद वह अपने स्तर पर सर्वश्रेष्ठ प्रदर्शन करने का प्रयास कर रहा है। मंत्रालय अव्यवहार्य होने पर भी विभिन्न प्रकार की रियायतों की घोषणा करता रहा। हाल ही में कॉर्पोरेट कर में जो कटौती की गई है वह अपने आप में बहुत बहादुरी भरा कदम है क्योंकि इससे राजकोष को करीब 1.5 लाख करोड़ रुपये का नुकसान सहन करना होगा। चूंकि इसका अप्रत्यक्ष कर राजस्व पर सीधा असर होगा, ऐसे में राजकोषीय घाटे को जीडीपी के 3 फीसदी तक सीमित रखने की बात अब इतिहास की बात हो चुकी है।

सवाल यह है कि अब इसके आगे क्या? नकदी डालने के निष्प्रभावी कदम और जरूरी कर सुधारों (जिसे अब अंजाम दिया जा चुका है) के अलावा सरकार को क्या कुछ करने की आवश्यकता है? अर्थव्यवस्था दोबारा पटरी पर कैसे आ सकती है? इसका जवाब पांच बातों में निहित है।

पहली बात, मोदी को यह स्वीकार करना होगा कि वह गलत थे। उन्हें वित्त मंत्रालय को यह निर्देश देना होगा कि 90 फीसदी वस्तुओं को शून्य दर के दायरे में लाए। इसी प्रकार 5 फीसदी से ऊपर की तमाम दरों को 18 फीसदी की एकल दर में समाहित कर दिया जाना चाहिए।

दूसरी बात, व्यक्तिगत आय कर की दरों को भी अगले बजट में 20 और 30 फीसदी के दो स्लैब में सीमित कर दिया जाना चाहिए। इसके अलावा कर लगाने की सीमा को बढ़ाकर 18 लाख कर दिया जाना चाहिए। यानी अगर कोई व्यक्ति मासिक 1.5 लाख रुपये या इससे कम कमाता है तो उस पर कोई कर नहीं लगाना चाहिए। यह काफी अधिक लग सकता है लेकिन मध्यवर्गीय व्यक्ति को जिस तरह के खर्च का सामना करना पड़ता है, उसे देखते हुए इतनी रियायत बहुत ज्यादा नहीं है। मैंने कुछ सप्ताह पहले इस बारे में लिखा भी था। इसके लिए काफी हद तक शहरी क्षेत्रों में परिवार की बदलती स्थिति से भी है।

तीसरी बात है परिसंपत्ति के निस्तारण की। एकमात्र परिसंपत्ति जिसे बिना मजदूर संगठनों और सुरक्षा के मसलों के बिना बेचा जा सकता है, वह है जमीन। सरकार को इस प्रक्रिया की शुरुआत अपने सामाजिक कार्यक्रमों के वित्त पोषण के लिए करनी चाहिए। तब कोई शिकायत नहीं करेगा।

चौथा, राजस्व में अस्थायी रूप से आने वाली कमी की फंडिंग का भी सवाल है। मैं बीते एक वर्ष से अधिक समय से इस विषय पर लिख रहा हूं कि अब वक्त आ गया है कि तदर्थ बिलों को एक बदले हुए स्वरूप में नया जीवन प्रदान किया जाए। ऐसा करना नई नकदी छापने के समान ही है और यह एक बड़ा संसाधन होगा।

यहां मुद्दा यह है कि महज इसलिए क्योंकि राजीव गांधी ने सन 1986 से 1989 तक राजीव गांधी ने इन्हें प्रमुखता दी और सन 1990 में हमें इनका खमियाजा उठाना पड़ा तो इसका यह मतलब नहीं है कि ये एकदम बेकार ही हैं। सच्चाई तो यही है कि इन्होंने हमारी एक अहम जरूरत को पूरा किया। अब जरूरत यह है कि इनकी मौजूदा सीमा को बढ़ाया जाए। 100,000 करोड़ रुपये की मौजूदा सीमा बहुत कम है। इसका निर्धारण भी दो दशक पहले किया गया था।

पांचवीं और सबसे अहम बात यह है कि इस अवधारणा को त्यागना होगा कि सरकार व्यय चाहती है और इसे हासिल करने के लिए राजस्व में इजाफा करना जरूरी है। कर और व्यय हमेशा व्यय और कर के समान नहीं होते।

ऐसे में एक ओर जहां आम जनता की मांग यही है कि सरकार को व्यय में इजाफा करना चाहिए, वहीं जरूरत इस बात की है कि व्यय पर भारी अंकुश लगाया जाए। निजी तौर पर मेरा मानना है कि प्रधानमंत्री मोदी में यह करने की पूरी क्षमता है। आगामी पांच वर्ष में 15 फीसदी की कटौती से काम हो जाएगा। इससे पहले सन 1967, 1974, 1981 और 1991 में ऐसा किया जा चुका है।

सन 2014 में मोदी के सत्ता में आने के तत्काल बाद ही विमल जालान समिति का गठन किया गया था। इस समिति ने कई उपयोगी विचार प्रस्तुत किए। लब्बोलुआब यह है कि व्यय में बदलाव लाया जाए और ऐसे सेवानिवृत्त लोगों को भुगतान बंद किया जाए जिनके पास पेंशन के अलावा आय के अन्य स्रोत हैं।

प्रधानमंत्री ने सन 2014 में अपने कार्यकाल की शुरुआत संकट के दौर से की थी और वर्ष 2019 में एक बार फिर ऐसा ही हुआ। पहले अवसर पर वह इससे निजात पाने में कामयाब रहे थे। उन्हें लगा कि अकेले सेवा आपूर्ति का सुधार पर्याप्त रहेगा। यह नरसिंह राव-मनमोहन सिंह के सुधारों के उलट था जो मानते थे कि वृहद आर्थिक सुधार ही पर्याप्त हैं। मोदी की खुशकिस्मती है कि उनके पास एक बार फिर यह सुनहरा अवसर है कि वह एक बड़े सुधारक के रूप में सामने आएं। उनके पास साढ़े चार वर्ष का समय है। देखना होगा कि वह इसका इस्तेमाल कैसे करते हैं।

कानाफूसी

मांझी की नाराजगी

बिहार की 243 विधानसभा सीटों में से पांच में आगामी 21 अक्टूबर को उपचुनाव होना है। राष्ट्रीय जनता दल, कांग्रेस और अन्य दलों के महागठबंधन ने अब तक इन विधानसभा सीटों और समस्तीपुर लोकसभा सीट के लिए आपस में कोई राय नहीं बनाई है। हिंदुस्तानी अवाम मोर्चा यानी हम के अध्यक्ष जीतन राम मांझी भी इस महागठबंधन में शामिल हैं। सोमवार को उन्होंने कहा कि चाहे जो भी हो लेकिन उनकी पार्टी भागलपुर के नाथनगर से विधानसभा चुनाव जरूर लड़ेगी। उन्होंने हाल ही में अपनी पार्टी को गठबंधन से बाहर करने की धमकी भी दी। भागलपुर की सीट जदयू विधायक अजय मंडल के लोकसभा में चुने जाने के कारण खाली हुई है। मांझी की यह पहली नाराजगी नहीं है। दो महीने पहले भी उन्होंने अपनी पार्टी की अनदेखी का इल्जाम लगाया था और अगले वर्ष विधानसभा चुनाव अकेले दम लड़ने की धमकी दी थी।

प्रतिभा खोज

उत्तर प्रदेश में नेतृत्व के संकट से जूझ रही कांग्रेस पार्टी ने राज्य में अपनी अल्पसंख्यक इकाई के लिए योग्य नई टीम तैयार करने की कोशिश में हाल ही में एक प्रतिभा खोज का आयोजन किया। लखनऊ स्थित उत्तर प्रदेश कांग्रेस कमेटी के कार्यालय में हुए इस प्रतिभा खोज आयोजन में प्रदेश के 40 पूर्वी और उत्तरी जिलों से करीब 600 युवा शामिल हुए। सूत्रों का कहना है कि इस कवायद की शुरुआत अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी की महासचिव प्रियंका गांधी के आदेश पर की जा रही है। कांग्रेस पार्टी के सूत्रों ने कहा कि उत्तर प्रदेश के पश्चिमी इलाकों में स्थित जिलों में भी ऐसी ही प्रतिभा खोज आयोजित करने की योजना है।

आपका पक्ष

पर्यावरण बचाने के लिए कदम उठाएं लोग

पिछले दिनों शिकागो और वारसा समेत दुनिया के कई शहरों में पर्यावरण बचाने के लिए स्कूली बच्चों सहित लाखों युवा सड़क पर उतरे। वे पर्यावरण बचाने के लिए जागरूकता के साथ-साथ संदेश देना चाह रहे हैं कि पर्यावरण संतुलन के बगैर पृथ्वी को अधिक समय तक महफूज नहीं रखा जा सकता है। इस प्रदर्शन में बच्चे, युवा और नागरिक अपने हाथ में तख्तियां लेकर कुदरत को बचाने के लिए दुनिया के तमाम देशों से सक्रियता दिखाने की अपील कर रहे हैं। पर्यावरणीय मुद्दों पर शोध करने वाली संस्था आईपीसीसी के वैज्ञानिकों ने एक रिपोर्ट प्रकाशित की है। इस रिपोर्ट के मुताबिक पृथ्वी का तापमान तेजी से बढ़ रहा है। वर्ष 1950 के बाद धरती और महासागर के ऊपर का तापमान हर दशक में औसतन 0.2 डिग्री सेल्सियस से बढ़ता जा रहा है। पर्यावरण विषय पर अमेरिका

में किशोरों और युवाओं की एक बैठक हुई। बैठक का उद्देश्य पर्यावरण बचाने के लिए प्रयास किए जाने का था। कक्षा 10 की छात्र-छात्राएं द्वारा शुरू की गई इस मुहिम को युवाओं और लोगों का भरपूर समर्थन मिला है। पर्यावरण बचाने के लिए प्रदर्शन कर रहे बच्चों का कहना है कि सरकार, कारखाने और संस्थाओं

पर्यावरण संरक्षण के लिए सरकारी प्रयासों के साथ लोगों को भी आगे आना चाहिए

आदि के झूठे वादों, आधी-अधूरी तैयारी और पर्यावरणीय मुद्दों की अनदेखी का खमियाजा आने वाली पीढ़ियों को बुरी तरह से भुगतना पड़ सकता है। पर्यावरण को बचाने के लिए अब सरकारी वादों पर नहीं बल्कि लोगों को खुद कदम उठाने होंगे जिससे हमारे आने वाली पीढ़ियां स्वच्छ वातावरण में जी सकें।

पवन कुमार मौर्य, नोएडा

प्लास्टिक उद्योग के कर्मी न हों बेरोजगार

ऑल इंडिया प्लास्टिक मैन्युफैक्चरर्स एसोसिएशन का अनुमान है कि दैनिक उपयोग में आने वाले प्लास्टिक का लगभग पांच हिस्सा एकल इस्तेमाल वाले प्लास्टिक का होता है। केंद्रीय प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड की ओर से 12 वस्तुओं पर प्रतिबंध लगाने का प्रस्ताव शामिल है जिसमें बहुस्तरीय पैकेजिंग को भी शामिल किया गया है। एक रिपोर्ट के अनुसार देश में प्रतिवर्ष 13 किलोग्राम प्लास्टिक की प्रति व्यक्ति खपत है। देश में जितना प्लास्टिक कचरा उत्पन्न होता है उसका लगभग 10 प्रतिशत का ही पुनर्चक्रण हो पाता है। प्लास्टिक के इस्तेमाल से पर्यावरण अधिक प्रदूषित हो रहा है जिससे मनुष्यों और जीव-जंतुओं की सेहत पर कुप्रभाव पड़ रहा है। हमारे दैनिक जीवन में प्लास्टिक का जुड़ाव गहरा गया है क्योंकि यह काफी सस्ता होता है। प्लास्टिक अपने कम वजन तथा मजबूती की वजह से अर्थव्यवस्था का अभिन्न और महत्त्वपूर्ण हिस्सा बन गया है। प्लास्टिक के दुष्परिणाम के प्रति लोगों को जागरूक करने के लिए प्रचार व प्रसार करने की जरूरत है। औद्योगिक संस्थानों को प्लास्टिक के विकल्प तलाशने होंगे जो पर्यावरण के अनुकूल हों तथा इसकी लागत भी कम हो। इसके लिए सरकार को साथ मिलकर कार्य करने होंगे। इसके साथ ही इस उद्योग से जुड़े लोगों के रोजगार पर भी ध्यान देने की जरूरत है।

मांडवी कोशले, बलौदा बाजार

पाठक अपनी राय हमें इस पते पर भेज सकते हैं : संपादक, बिजनेस स्टैंडर्ड लिमिटेड, 4, बहादुर शाह जफर मार्ग, नई दिल्ली - 110002. आप हमें ईमेल भी कर सकते हैं : lettershindi@bsmail.in उस जगह का उल्लेख अवश्य करें, जहां से आप ईमेल कर रहे हैं।